'रघुवंशम्' महाकाव्य की संक्षिप्त कथा

'रघुवंश' महाकाव्य कालिदास की नैसर्गिक प्रतिभा का फल है। इसके उन्नीस (19) सर्ग है। इसमें सूर्य-वंश के विश्व-विदित यशस्वी राजाओं के जीवन-चरित्र का वर्णन है। तथापि कालिदास से पूर्व भी कुछ कवि जैसे महर्षि वाल्मीकि, महाकवि भास आदि इस विषय को लेकर काव्य लिख चुके थे और स्वयं कालिदास ने भी अपने रघुवंश महाकाव्य के आरम्भ में इस बात को स्वीकार किया है तथापि उन्होंने अपने पूर्ववर्ती महाकविवाल्मीकि की रामायणी कथा का आँख मूंद कर अनुकरण नहीं किया है। वाल्मीकिकृत रामायण की कथा अयोध्यानगरी में महाराजा दशरथ के राज्य से प्रारम्भ होती है और श्री राम के पुत्रों तथा भाईयों के वृत्तान्त के उल्लेख के साथ समाप्त होती है। परन्तु महाकवि कालिदास के 'रघुवंश' महाकाव्य की कथा श्री राम के पूर्वज राजा दिलीप के वर्णन से प्रारम्भ होती है तथा विषयासक्त कामुक राजा अग्निवर्ण की मृत्यु के वर्णन के साथ अकस्मात् ही समाप्त हो जाती है। कभी-कभी विद्वान् रघुवंश के पौराणिक पात्रों तथा आद्य गुप्त सम्राटों के ऐतिहासिक चरित्र में परस्पर समानता ढूढ़ने का प्रयास करते हैं। परन्तु इस प्रकार की तुलना तथा विस्तार में जाने से पूर्व रघुवंश की विस्तृत विषय सूची को उसके प्रत्येक सर्ग के सारांश के साथ जान लेना अधिक उपयुक्त होगा। अतः सबसे पहले 'रघुवंश' के प्रत्येक सर्ग की विषय वस्तु का सार नीचे क्रमपूर्वक दिया जाता है:

प्रथम सर्ग

वैवस्वत मनु के वंश में महाराज दिलीप नामक सुप्रसिद्ध सम्राट् हुए। मगध देश की राजकुमारी सुदक्षिणा उनकी रानी बनी। दुर्भाग्य से दिलीप को सुदक्षिणा से कोई संतान नहीं हुई। दिलीप इस बात से बहुत खिन्न रहते थे। एक दिन वे सुदक्षिणा को अपने साथ लेकर इस सम्बन्ध में अपने कुलगुरु महर्षि वशिष्ठ के आश्रम में पहुंचे। तब ऋषि ने ध्यान लगाकर राजा के सन्तान न होने का यह कारण ज्ञात किया कि एक बार स्वर्गलोक से भूलोक को लौटते हुए राजा ने मार्ग में खड़ी दिव्य गौ सुरभि (कामधेनु) के प्रति उचित सम्मान प्रदर्शित नहीं किया था। इस उपेक्षावृत्ति से रुष्ट होकर सुरभि ने राजा को शाप दिया कि उसको तब तक सन्तान नहीं होगी जब तक वह उसकी पुत्री नन्दिनी गौ को सेवा से संतुष्ट नहीं कर लेगा। सौभाग्य से सुरभि की पुत्री नंदिनी गौ उस समय ऋषि के आश्रम में ही विद्यमान थी। अतः ऋषि ने राजा को आदेश दिया कि वह अपनी रानी के साथ नंदिनी की सेवा

करके उसे प्रसन्न करे और पुत्र-प्राप्ति के लिए उसका आशीर्वाद प्राप्त करे। राजा एवं रानी नियमापेक्षा से महर्षि वशिष्ठ के आश्रम में मुनिवृत्ति से रहने लगे।

द्वितीय सर्ग

महाराजा दिलीप और महारानी सुदक्षिणा ने परम भक्ति और निष्ठा के साथ नन्दिनी की सेवा आरम्भ कर दी। एक दिन जब राजा दिलीप हिमालय पर्वत के सौंदर्य को मुग्ध होकर देख रहे थे, तो सहसा पर्वत की गुफा से निकलकर किसी सिंह ने नन्दिनी गाय को पकड़ लिया। गौ के प्राणों की रक्षा के लिए राजा ने अपने को बलिदान करना चाहा। धर्मनिष्ठ राजा को प्राणों की अपेक्षा गोरक्षा अधिक प्रिय था। एक गाय की रक्षार्थ चक्रवर्तित्व का बलिदान भारत ही की देन है। परन्तु राजा दिलीप के आश्चर्य का ठिकाना न रहा जब सिंह ने मनुष्य की वाणी में कहा कि वह शिव का सेवक है। उसने राजा को गौ की रक्षा के लिए अपने प्राणों का उत्सर्ग करने से रोका। राजा फिर भी सिंह से प्रार्थना करते रहे और गौ के स्थान पर उसे अपना शरीर भोजन के रूप में देने का आग्रह करते रहे। राजा की ऐसी बलिदान तथा आत्म-त्याग की भावना को देखकर नन्दिनी अत्यन्त प्रसन्न हुई और इस सारे रहस्य को खोलते हुए उसने कहा कि उसने राजा की परीक्षा लेने के लिए यह माया रची थी। वस्तुतः वहां कोई सिंह नहीं था। प्रसन्न होकर उस नंदिनी गाय ने राजा को वर दिया कि उसको पुत्र होगा।

तृतीय सर्ग

समय आने पर सुदक्षिणा ने पुत्र को जन्म दिया। इस सर्ग में राजकुमार रघु के जन्म और उसकी शिक्षा का वर्णन है। दिलीप ने अपने पुत्र राजकुमार रघु को अश्वमेध यज्ञ के अश्व का संरक्षक नियुक्त किया। अश्व-रक्षा रूप अपने कर्त्तव्य के पालन में राजकुमार को देवराज इन्द्र के विरुद्ध भी युद्ध करना पड़ा। यद्यपि वे इन्द्र के अधिकार से अश्व को मुक्त कराने में सफल नहीं हुए, तथापि उन्होंने इस साहसिक कार्य से अपने पिता दिलीप को संतुष्ट कर उनकी इच्छा पूर्ण की। तदन्तर ऋषि के उपदेश से राजा दिलीप प्रजापालन का उत्तरदायित्व अपने पुत्र रघु को सौंप कर स्वयं वन में तपस्या करने के लिए चले गये।

चतुर्थ सर्ग

शासक के रूप में रघु अपने पिता दिलीप से भी श्रेष्ठ सिद्ध हुए। इस सर्ग में कवि ने रघु की दिग्विजय का सजीव चित्र प्रस्तुत करते हुए उनकी विजय यात्रा में आने वाले स्थानों, उनके पिता द्वारा किये गये युद्धों तथा उनके हाथों पराजित राजाओं तथा जातियों का ही विशद वर्णन किया है।

पंचम सर्ग

दिग्विजय के पश्चात् रघु ने विश्वजित् यज्ञ किया जिसमें उन्होंने अपना सारा धन यज्ञ की दक्षिणा के रूप में ब्राह्मणों में बाँट दिया। इस विश्वजित् यज्ञ के परिणामस्वरूप जब रघु सर्वथा निर्धन हो गये तो एक दिन ऋषि कौत्स दान मांगने के लिए उनके पास पहुंचे। इस पर रघु कुछ समय के लिए किंकर्त्तव्यविमूढ़ बने रहे परन्तु फिर भी उन्होंने धनाधीश कुबेर से ऋषि को देने के लिए आवश्यक धन की याचना की। कुबेर ने प्रसन्न होकर स्वेच्छा से रघु के कोष को स्वर्ण की प्रचुर वर्षा करके भर दिया। ऋषि कौत्स ने अपनी इच्छा पूर्ण हो जाने पर प्रसन्न होकर रघु को आशीर्वाद दिया, तदनुसार उनके अज नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। जब राजकुमार अज युवा हुए तो राजा भोज ने उन्हें अपनी पुत्री इन्दुमती के स्वयंवर में आमन्त्रित किया।

षष्ठ सर्ग

इस सर्ग में इन्दुमती के स्वयंवर का यथार्थ चित्रण है जिसमें राजकुमारी इन्दुमती ने स्वयंवर में आए अन्य राजकुमारों की उपेक्षा करके अज के गले में पुष्पों की माला पहनाकर उन्हें अपना पति चुना।

सप्तम सर्ग

अज और इन्दुमती दोनों का विधिपूर्वक विवाह हुआ। पर जब नव विवाहित दम्पत्ति अयोध्या को लौट रहे थे, मार्ग में स्वयंवर में निराश राजकुमारों ने बदला लेने के लिए उन पर आक्रमण कर दिया। परन्तु अज ने अकेले होने पर भी इन सुसंगठित राजकुमारों का वीरतापूर्वक सामना किया और उन्हें पराजित कर उनके दर्प को नष्ट कर दिया।